5

प्राथमिक कक्षाओं में शिक्षण– एक भावनात्मक दायित्व

अपर्णा व्यास*

प्राचीनकाल से ही शिक्षण सर्वश्रेष्ठ तथा सम्माननीय कार्य माना जाता है। प्राथमिक शिक्षा बच्चे की बुलंद इमारत में नींव का पत्थर होती है। इतिहास साक्षी है कि कई महापुरुषों को गगनचुंबीय हौसले बचपन में हुई घटनाओं के दौरान ही प्राप्त हुए थे। ऐसे में प्राथमिक शिक्षण को महज एक कार्य या नौकरी न समझते हुए शिक्षकों को भावनात्मक दायित्व मानकर ही अग्रसर होना चाहिए। बच्चे का संपूर्ण व्यक्तित्व प्राथमिक शिक्षक के उचित मार्गदर्शन, स्नेहपूर्ण सानिध्य और हृदयस्पर्शी दैनिक वार्तालाप पर ही विकसित होता है।

प्राथमिक कक्षा बच्चे की आधारभूत तथा सबसे महत्वपूर्ण कक्षा होती है। बच्चे का सर्वांगीण विकास बचपन में मिले संस्कार एवं शिक्षा पर निर्भर होता है। किंतु आज के आधुनिक परिवेश में प्राथमिक शिक्षक क्या सही मायने में बच्चों के साथ न्याय कर पा रहे हैं? कई शिक्षकों को तो प्राथमिक शिक्षक कहलाने में भी हीनभावना महसूस होती है। ऐसी स्थिति में जहाँ शिक्षक स्वयं ही अपने जीविकोपार्जन के माध्यम से संतुष्ट नहीं है, वहाँ अबोध बच्चे की जिज्ञासा की तुष्टि कैसे कर पाएँगे? बच्चों के स्वस्थ विकास हेतु अनुकूल वातावरण कैसे निर्मित कर पाएँगे?

प्राथमिक कक्षाओं में शिक्षण एक कार्य से अधिक भावनात्मक दायित्व है। बच्चों की कोमल भावनाओं को समझने का दायित्व, उनकी मासूमियत से भरी बातों को चाव से सुनने का दायित्व, उनकी बातों पर उनके मर्मस्पर्शी हृदय को छू जाने वाली प्रतिक्रिया करने का दायित्व, रोते हुए बच्चों को हँसाने का दायित्व तथा उन्हें स्नेह एवं विश्वास से परिपूर्ण वातावरण देने का दायित्व। जी हाँ, इतने सभी दायित्वों का निर्वाह करने वाला शिक्षक ही बच्चों को सही प्राथमिक शिक्षा देने का अधिकारी है। बचपन में घटी घटनाओं का प्रभाव बच्चों के मन पर जीवनपर्यंत रहता है।

* *प्रवक्ता*, श्री गुजराती समाज बी.एड. कॉलेज, इंदौर, मध्य प्रदेश

मैं जब कक्षा तीन की छात्रा थी तब कक्षा में एक रोहित नाम के बच्चे का प्रवेश हुआ। उसे कक्षा में आए एक-दो दिन ही हुए थे। गणित पढ़ाने वाली शिक्षिका ने सभी बच्चों को पाँच सौ तक की गिनती लिखने को कहा। मैं तो तीन सौ तक ही पहुँची थी, किंतु रोहित ने सात सौ तक की गिनती सबसे पहले लिखकर कक्षा में शिक्षिका से जँचवाई। शिक्षिका ने सभी बच्चों के समक्ष रोहित की इतनी तारीफ़ की कि मेरा मन भी उसी की तरह प्रशंसा पाने को लालायित हो उठा। तभी से मैं भी मन लगाकर कक्षा में अव्वल आने के लिए निंरतर अभ्यास में लगी रहती। शिक्षिका के द्वारा की गई दूसरे बच्चे की प्रशंसा मेरे लिए प्रेरणास्रोत साबित हुई। ऐसी कई छोटी-छोटी घटनाएँ प्रतिदिन कक्षा में होती रहती हैं, जिनका जाने-अनजाने बच्चों के मन-मस्तिष्क पर ऐसा प्रभाव पड़ता है कि या तो वे अनुभव शूल बनकर रह जाते हैं या सुगंधित पुष्प बनकर जीवनभर व्यक्ति को महकाते रहते हैं।

ऐसी ही एक और घटना का विवरण यहाँ प्रासंगिक है। जब मैं एक विद्यालय में पढ़ाती थी, वहाँ प्रत्येक शिक्षिका कक्षा पाँचवीं के एक विद्यार्थी आशुतोष की निंदा करती थी। सभी का यह कहना था कि छात्र पढ़ाई में ध्यान ही नहीं देना चाहता है और हमेशा अन्य छात्रों को परेशान करता रहता है। उसका दिमाग भी कमज़ोर है। एक दिन मैंने उसी कक्षा में जाकर हिंदी का एक पाठ पढ़ाया जिसमें अचरज शब्द का उल्लेख था। मैंने अचरज का अर्थ जानने वाले बच्चों को हाथ ऊपर उठाने के लिए कहा। कोई दो या तीन बच्चों ने रटा-रटाया अर्थ जैसे आश्चर्य करना, अचंभित होना आदि बताया। मैंने जब आशुतोष से इसका अर्थ बताने को कहा, तब उसने जवाब दिया—मैडम, यदि कोई बच्चा लगातार कक्षा में फेल होता है और किसी दिन वह कक्षा में प्रथम आ जाए तो जो होगा उसे अचरज कहेंगे। क्या अब आप आशुतोष को दिमाग से कमजोर और पढ़ाई पर ध्यान न देने वाला बालक कहेंगे? अन्य छात्रों को किताबी अर्थ मालूम था, किंतु आशुतोष व्यवहारिक अर्थ से भली भाँति परिचित था। मैंने आशुतोष की मुक्तकंठ से प्रशंसा की जिसका प्रतिफल मुझे उसके कक्षा में आए सकारात्मक व्यवहार तथा परीक्षा में अच्छे अंक के रूप में देखने को मिला।

अक्सर ऐसा होता है कि जब छात्र किसी प्रश्न का जवाब इस उम्मीद से देता है कि टीचर खुश होकर शाबाशी देंगी तब कई शिक्षकों को वह जवाब बहुत ही साधारण लगता है, क्योंकि वे इस उत्तर को पहले भी कई बार सुन चुके होते हैं लेकिन बच्चा वह उत्तर जीवन में पहली बार दे रहा है। इस बात को तथा इसके साथ ही बच्चे की उम्र को भी नज़रअंदाज़ न करें। मनोवैज्ञानिक और शिक्षाशास्त्री सिग्मंड फ्रायड ने व्यक्तित्व विकास के सिद्धांत में यह कहा तथा सिद्ध किया है कि बचपन में ही निश्चित हो जाता है बच्चे का व्यक्तित्व कैसा होगा? जीन पियाजे ने भी यह सिद्धांत प्रतिपादित किया है कि बच्चे का अधिकतम मानसिक विकास सात वर्ष की उम्र तक ही हो जाता है। अत: बच्चे की बाल्यावस्था को जीवन की

सबसे महत्वपूर्ण अवस्था मानकर प्राथमिक शिक्षकों को कक्षा में निम्न बातों का ध्यान अवश्य रखना चाहिए–

- प्रतिदिन बच्चों का स्वागत मुस्कुराहट के साथ करें।
- बच्चों में व्यक्तिगत रुचि लें।
- उनके द्वारा किए गए छोटे-से-छोटे प्रयासों की भी सराहना करें। प्रशंसा करने में कंजूसी न करें।
- सभी बच्चों को नाम लेकर पुकारें। इससे वे आत्मीयता महसूस करेंगे।
- बच्चों के कोलाहल में शोर नहीं अपितु किलकारियों की गूँज को सुनने का प्रयास करें।
- बच्चों की मौलिक अभिव्यक्ति को सहज रूप में लें। उन्हें कभी भी उपहास का पात्र न बनाएँ।
- बच्चों की सृजनात्मकता का सदैव सम्मान करें। उनकी कला को प्रोत्साहित करने का कोई भी अवसर न छोड़ें।
- बच्चों द्वारा पूछी गई छोटी-से-छोटी जिज्ञासा भरी बात का भी अत्यंत रोचक अंदाज़ में उत्तर दें।
- बच्चों को तुलनात्मक नज़रिए से न देखें।
- उन्हें यह विश्वास दिलाएँ कि वे हर काम को बखूबी कर सकते हैं। प्रत्येक बच्चे की व्यक्तिगत विशेषता को निखरने का अवसर दें।

वैसे तो उपरोक्त लिखी गई बातें लगभग सभी शिक्षकों को विदित होती हैं, किंतु व्यवहारिक परिवर्तन तभी होगा जब प्राथमिक शिक्षक स्वयं में गुणात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास करेंगे। प्राथमिक शिक्षा पर बच्चे का मानसिक, शारीरिक, नैतिक, मौलिक और भावनात्मक विकास टिका होता हैं। अतः प्राथमिक शिक्षण को मात्र एक नौकरी नहीं अपितु भावनात्मक दायित्व मानते हुए बच्चों को शिक्षित और संस्कारित करें। अभिभावक के समान ही शिक्षक बच्चों के लिए सब कुछ होते हैं। उन्हीं की उँगली अपने नन्हे हाथों से थामकर वे पढ़ना-लिखना सीखते हैं, उन्हीं को अपना आदर्श मानकर छोटे-छोटे सपने देखना शुरु करते हैं, तो क्यों न उन सपनों को पूरा करने में हम अपना सर्वस्व न्यौछावर करते हुए देश को ऐसे उत्तराधिकारी दें जो गर्व से यह कह सकें कि हमारी बुलंद हस्ती में प्राथमिक शिक्षक का योगदान वंदनीय तथा अतुल्य है।